पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा': तिरस्कृत समाज की अकथ कथा

पूनम सूद

एसोसिएट प्रोफेसर, श्री वेंकटेश्वर कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

आज साहित्य में कई गंभीर और जरूरी विमर्शों की चर्चा हो रही है—स्त्री-विमर्श, दलित विमर्श, अल्पसंख्यक विमर्श, आदिवासी विमर्श—जिनके जरिए समाज के उन वर्गों की बात हो रही है, जो लंबे समय से हाशिए पर रहे। लेकिन इन सबके बीच एक ऐसा समुदाय है, जिसके दर्द और संघर्ष को साहित्य में उतनी गहराई से जगह नहीं मिली—वह है किन्नर समुदाय। यह समुदाय हमारे समाज का हिस्सा पौराणिक काल से रहा है। महाभारत में शिखण्डी का चरित्र हो या अर्जुन का बृहन्नला के रूप में अज्ञातवास, किन्नरों का जिक्र प्राचीन ग्रंथों में मिलता है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी इनका उल्लेख है।

हमारा समाज पुरुष और स्त्री के दो आधारों पर टिका है, जिनका सहयोग सृष्टि को आगे बढ़ाता है। लेकिन इनके अलावा एक तीसरा लिंग भी है—किन्नर, जो न पुरुष है, न स्त्री। समाज में इन्हें हिजड़ा, खोजा, छक्का, अरावली, नपुंसक जैसे कई नामों से पुकारा जाता है। संविधान इन्हें इंटरसेक्स, ट्रांससेक्सुअल या ट्रांसजेंडर के रूप में पहचान देता है और इन्हें तृतीय लिंग की श्रेणी में रखता है। संविधान का अनुच्छेद 15 साफ कहता है कि लिंग, जाति या धर्म के आधार पर किसी के साथ भेदभाव नहीं होगा। फिर भी, हमारी आंखों के सामने किन्नर समुदाय के साथ भेदभाव और उपेक्षा का सिलसिला बदस्तूर जारी है।

'किन्नर' शब्द 'कि' और 'नर' से बना है, लेकिन इसका मतलब हिमाचल की किन्नर जनजाति से नहीं, बल्कि उस समुदाय से है जो न पुरुष है, न स्त्री। 'हिजड़ा' शब्द सुनते ही हमारे दिमाग में एक खास छवि उभरती है—विशिष्ट चाल-ढाल, खास अंदाज, और अलग तरह का रहन-सहन। लेकिन क्या सिर्फ 'हिजड़ा' को 'किन्नर' कह देने से उनका दर्द कम हो जाता है? जैसा कि **चित्रा मुद्गल** ने लिखा, **"किन्नर कह देने भर से देह के नासूर नहीं मिटते।" उनके दर्द, उनकी पीड़ा, और उनकी उपेक्षा को शब्दों से ढकना काफी नहीं।1**

नीरजा माधव, महेंद्र भीष्म, प्रदीप सौरभ, चित्रा मुद्गल, अनुसूया त्यागी, निर्मला भुराड़िया, भगवंत अनमोल जैसे लेखकों ने अपने साहित्य में किन्नर समुदाय की जिंदगी, उनकी तकलीफों, आक्रोश और संघर्ष को उभारा है। किन्नरों को चार श्रेणियों में बांटा जा सकता है—बुचरा, नीलिमा, मनसा और हंसा। बुचरा जन्मजात किन्नर होते हैं, जो न पुरुष हैं, न स्त्री। नीलिमा वे हैं, जो किसी कारण खुद को किन्नर बनाते हैं। मनसा वे हैं, जो मानसिक रूप से खुद को किन्नरों के करीब पाते हैं, जिन्हें काउंसलिंग से उनके मूल लिंग में लौटाया जा सकता है। हंसा वे हैं, जो यौन अक्षमता के कारण किन्नर समुदाय से जुड़ जाते हैं, और इलाज के बाद सामान्य जीवन जी सकते हैं। इसके अलावा कुछ नकली किन्नर, जिन्हें अबुला कहा जाता है, सिर्फ पैसे के लालच में यह रूप अपनाते हैं। **लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी** ने अपनी आत्मकथा **'मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी'** में इस समुदाय की आर्थिक, सामाजिक स्थिति के संदर्भ में लिखती हैं कि **" हिजड़ों के पास बुद्धि नहीं होती ? उनके पास प्रतिभा नहीं होती? यह राजनीति में नहीं जा सकते? फौज में नहीं जा सकते ? इन बातों को किन तर्कों के आधार पर ते किया गया? आपने कलाकारों, प्रतिभावान को मजबूर कर दिया पचास रुपये में देह बेचने को, ताली बजाने को।2**

किन्नर समुदाय की कहानी सिर्फ लिंग की नहीं, बल्कि इंसानियत की है। साहित्य में उनकी आवाज को और बुलंद करने की जरूरत है, ताकि समाज उनकी पीड़ा को समझे और उन्हें वह सम्मान दे, जिसके वे हकदार हैं। **चित्रा मुद्गल** का उपन्यास **पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा** हिंदी साहित्य में इसी प्रकार का एक अनूठा प्रयास है, जो किन्नर समुदाय के जीवन, उनकी पीड़ा, और सामाजिक बहिष्कार को पत्राचार शैली में प्रस्तुत करता है। उपन्यास का केंद्रीय पात्र विनोद (उर्फ बिन्नी/बिमली) अपनी माँ वंदना बेन को पत्र लिखकर अपने जीवन की व्यथा, सामाजिक तिरस्कार, और आत्म-सम्मान की खोज को व्यक्त करता है। उपन्यास किन्नर समुदाय की संवेदनाओं, सामाजिक विडंबनाओं, और परिवर्तन की संभावनाओं का विश्लेषण करता है।

पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा मुंबई के उपनगरीय क्षेत्र नाला सोपारा में बसे किन्नर समुदाय के जीवन पर केंद्रित है। नाला सोपारा, जो मुंबई की लोकल ट्रेन का लगभग अंतिम स्टेशन है, आर्थिक रूप से कमजोर और हाशिए के समुदायों का निवास स्थान है। उपन्यास का नायक विनोद, जो जन्म से किन्नर है, अपने परिवार द्वारा सामाजिक दबावों के कारण घर से निकाल दिया जाता है।

वह अपनी माँ को पत्र लिखकर अपनी भावनाओं, संघर्षों, और समाज के दोहरे मापदंडों पर सवाल उठाता है। वह अपनी माँ से शिकायत करता है **" तूने, मेरी बा, तूने और पप्पा ने मिलकर मुझे कसाइयों के हाथ मासूम बकरी सा सौंप दिया। मेरी सुरक्षा के लिए कोई कानूनी कार्यवाही क्यों नहीं की ? मनसुख भाई जैसे पुलिस अधीक्षक पप्पा के के गहरे दोस्त के रहते हुए ? वो अपने आप मुझे बचाने के लिए तो आ नहीं सकते थे। मेरे आंगिक दोष की बात पप्पा ने उसने बांटी जो नहीं होगी, वरना वह मुझे बचाने जरूर आते"।3** विनोद की ओर से लिखी गई ऐसी तमाम चिट्ठियों में किन्नर जीवन की असंख्य त्रासदियों का परिचय मिलता है।

उपन्यास में किन्नर समुदाय की पीड़ा और सामाजिक बहिष्कार को गहनता से चित्रित किया गया है। विनोद का परिवार उसे सामाजिक बदनामी के डर से त्याग देता है, और वह किन्नर समुदाय में शामिल होने को मजबूर होता है। यहाँ वह न केवल सामाजिक तिरस्कार का सामना करता है, बल्कि किन्नर समुदाय के भीतर की शोषणकारी संरचनाओं से भी जूझता है। विनोद कहता है, **"लिंग-पूजक समाज लिंग-विहीनों को कैसे बर्दाश्त करेगा?"4** । (मुद्गल, चित्रा. (2016). पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन.) यह कथन समाज के दोहरे मापदंडों को उजागर करता है, जो शारीरिक अक्षमता को स्वीकार करता है, लेकिन लिंग-भेद को अस्वीकार करता है।

पिता ने विनोद को मृत घोषित कर दिया ताकि सामाजिक कलंक से बचा जा सके किंतु मां का ममत्व विषम परिस्थितियों में भी जिंदा रहता है। माँ पत्र व्यवहार द्वारा उसे अपने स्नेह पर विश्वास करने को कहती है। बिन्नी भी अपनी माँ की विवशता को भली भांति समझता है- **" तू विश्वास कर सकता है तो अपनी बा पर विश्वास न डिगने दे। तू जिस नरक से गुजर रहा है, वहां मैं तेरे साथ नहीं हूँ मगर तेरे उस नरक की हर गली मेरी छाती से होकर गुजरती है"5**

विनोद की पीड़ा केवल शारीरिक नहीं, बल्कि मानसिक और भावनात्मक भी है। वह अपनी माँ को लिखे पत्रों में अपनी बचपन की यादों, परिवार के प्रति प्रेम, और सामाजिक अस्वीकृति के दर्द को व्यक्त करता है। उदाहरण के लिए, वह लिखता है, **"मेरे घर का पता क्या कहीं कोई है बा? कैसी विभ्रम की स्थिति में जीता हूँ मैं..."।**6 यह पत्र विनोद की आत्म-पहचान और सामाजिक स्थान की खोज की त्रासदी को दर्शाता है।

पूरा उपन्यास पत्राचार शैली में लिखा गया है, जो विनोद और उसकी माँ के बीच भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक दूरी को उजागर करता है। जैसा कि ममता कालिया ने अपनी समीक्षा में लिखा**, "नाला सोपारा नितांत नई कथावस्तु प्रस्तुत करता है, नए शिल्प का उपन्यास है"।7** उपन्यास की यह शैली इसकी सबसे बड़ी विशेषता है। यह शैली न केवल कथानक को व्यक्तिगत और भावनात्मक बनाती है, बल्कि पाठक को विनोद के आंतरिक संघर्षों से जोड़ती है। पत्रों के माध्यम से विनोद अपनी माँ से संवाद करता है, जो सामाजिक और तकनीकी बाधाओं के कारण सीमित है। यह शैली उपन्यास को एक दस्तावेज़ी स्वरूप प्रदान करती है, जो किन्नर समुदाय की वास्तविकता को प्रामाणिक बनाता है।

पत्रों में विनोद की भाषा व्यंग्यात्मक, प्रश्नात्मक, और भावनात्मक है। वह समाज से सवाल करता है, **"समाज को ऐसे लोगों की आदत नहीं है और वे आदत डालना भी नहीं चाहते पर मुझे विश्वास है, वक्त बदलेगा"।8** यह आशावादी दृष्टिकोण उपन्यास के अंत में वंदना बेन के माफीनामे और विनोद को घर वापसी के बुलावे में परिलक्षित होता है, जो सामाजिक परिवर्तन की संभावना को दर्शाता है।

उपन्यास न केवल किन्नर समुदाय की समस्याओं को उजागर करता है, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की आकांक्षा को भी व्यक्त करता है। विनोद एक प्रगतिशील किन्नर के रूप में उभरता है, जो शिक्षा के माध्यम से अपने समुदाय को सशक्त बनाना चाहता है। वह कहता है, **"शिक्षा ही एक ऐसा साधन है जो समाज में उन जैसों को बराबरी का दर्जा दिला सकता है"।**9 यह विचार आधुनिक भारत में किन्नर समुदाय के लिए कानूनी और सामाजिक स्वीकृति की दिशा में उठाए गए कदमों, जैसे **सुप्रीम कोर्ट के 2014 के फैसले (NALSA v. Union of India), से मेल खाता है, जिसमें किन्नरों को तीसरे लिंग के रूप में मान्यता दी गई।10**

उपन्यास में वंदना बेन का माफीनामा और विनोद को घर वापसी का निमंत्रण एक प्रतीकात्मक कदम है, जो परिवार और समाज में स्वीकृति की संभावना को दर्शाता है। जैसा कि **चित्रा मुद्गल** ने स्वयं कहा, **"यह अपील एक व्यक्ति भर की न रहकर, समूचे समाज की बन जाए, यही कथाकार की मूल मंशा है"।** 11

उपन्यास की आलोचना में कुछ विद्वानों ने इसकी भावनात्मकता को अति नाटकीय माना है। उदाहरण के लिए, तीसरी ताली उपन्यास के साथ तुलना करते हुए, कुछ आलोचकों ने कहा कि पोस्ट बॉक्स नं. 203 में मार्मिकता का पुट अधिक है, लेकिन यह कभी-कभी अतिशयोक्ति की ओर बढ़ता, उपन्यास की पत्राचार शैली को भी कुछ आलोचकों ने एकरसता का कारण माना, लेकिन अधिकांश ने इसे कथानक की संवेदनशीलता को बढ़ाने वाला माना।

उपन्यास का यह हिस्सा किन्नरों की लाचारी और समाज की क्रूर सच्चाई को उजागर करता है। कहानी में विधायक जी का भतीजा बिल्लू अपने साथियों के साथ मिलकर विनोद की सहेली पूनम जोशी के साथ दरिंदगी करता है, जिसकी वजह से पूनम की हालत इतनी बिगड़ जाती है कि वह अस्पताल में दम तोड़ देती है। यह सब जानते हुए भी कोई पुलिस या प्रशासन के खिलाफ आवाज़ उठाने की हिम्मत नहीं जुटा पाता, क्योंकि उनके पास न तो ताकत है, न पैसा — बस है तो बेबसी और खौफ, जो उन्हें चुप रहने पर मजबूर कर देता है।

"उपन्यास की संवेदना के चरम को आत्मसात करने के लिए आवश्यक है कि उसे अंत से पढ़ा जाए। अंत यानी कि समाचार संख्या 2– जहां मीठी नदी में एक किन्नर की फूली हुई लाश बरामद होती है। जिसे आपसी रंजिश का मामला माना जा रहा है। इस हत्या में 'अंडरवर्ल्ड' की भूमिका की बात की जा रही है। लाश की पहचान और हत्या के कारण अस्पष्ट दिखाए गए हैं पर पाठक के मन में पूरी तरह स्पष्ट हो उठते हैं कि यह लाश विनोद उर्फ बिन्नी की है। इस मात्र एक साधारण घटना समझकर छोड़ा नहीं जा सकता। यही वह मुख्य बिंदु है जहां से राजनीति का घृणित स्वरूप उजागर होता है"।12

समाज में स्त्री दूसरी सत्ता के रूप में ही सामने आई है, जो किसी भी महत्वपूर्ण फैसले में अपना योगदान देने में भी एक कदम पीछे ही रह जाती है, इसी का शिकार वंदना बैन भी होती है चाहकर भी वह अपने किन्नर पुत्र को नहीं रोक पाती और उसे विनोद से बिन्नी बन जाना पड़ता है। चित्रा मुद्गल ने कहा है – **"स्त्री ने कभी अपनी कोख को अपनी स्वायत्तता का मुद्दा नहीं बनाया। शायद इसकी वजह से पितृसत्ता का दबाव है। लेकिन अब समय आ गया है कि स्त्री को अपनी कोख पर हक जताना होगा"13**

पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा हिंदी साहित्य में किन्नर समुदाय के प्रति संवेदनशील और यथार्थवादी चित्रण के लिए एक महत्वपूर्ण कृति है। चित्रा मुद्गल ने पत्राचार शैली के माध्यम से विनोद के संघर्षों और आकांक्षाओं को जीवंत किया है, जो समाज के दोहरे मापदंडों और किन्नर समुदाय की पीड़ा को उजागर करता है। विनोद उर्फ बिन्नी का यह कथन **" जरूरत है सोच बदलने की, संवेदनशील बनने की। सोच बदलेगी तभी जब अविभावक अपने लिंग दोषी बच्चों को कलंक मान किन्नरों के हवाले नहीं करेंगे। उन्हें घूरे में नहीं फेकेंगे। ट्रांसजेंडर के खाते में नहीं धकेलेंगे। यह पहचान जब उन्हें किन्नरों के रूप में जीने नहीं दे रही, समाज में तो सरकारी मान्यता मिल जाने के बाद जीने देगी। किन्नरों के रूप में समाज ने उन्हें उस खांचे में सदियों पूर्व धकेलकर रखा हुआ है। उसी रूप में उन्हें आरक्षित करके सरकार अविभावकों को अपराध मुक्त कर खुली छूट दे रही है। पैदा होते ही वह लिंग दोषी बच्चों को ट्रांसजेन्डर जमात के हवाले कर अपनी जिम्मेदारी से छुट्टी पा लेते हैं।"14** विनोद का यह कथन अकेले उसी का नहीं है पूरे किन्नर समाज का आक्रोश है।

संदर्भ

1. मुद्गल, चित्रा. (2016). पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन. पृष्ठ 27
2. त्रिपाठी, लक्ष्मीनारायण; मैं हिजड़ा...मैं लक्ष्मी!; ! पृ. 25
3. मुद्गल, चित्रा. (2016). पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन. पृष्ठ
4. मुद्गल, चित्रा. (2016). पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन. पृष्ठ 23
5. मुद्गल, चित्रा. (2016). पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन. पृष्ठ 71
6. मुद्गल, चित्रा. (2016). पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन. पृष्ठ 40
7. कालिया, ममता. (2016). "किन्नरों के दुख-दर्द को बयान करता उपन्यास". नवभारत टाइम्स ब्लॉग
8. मुद्गल, चित्रा. (2016). पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन. पृष्ठ 69
9. मुद्गल, चित्रा. (2016). पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन. पृष्ठ 137
10. Verdict of Supreme Court in the case of National Legal Service Authority Vs Union of India on 15th April 2014 by the bench of Justice A.K. Sikri and K.S. Radhakrishnan
11. मुद्गल, चित्रा. (2016). पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन. भूमिका से
12. थर्ड जेंडर के संघर्ष का यथार्थ, संपा. डॉ. शगुफ्ता नियाज़, पृष्ठ संख्या 60
13. 'ओपिनियन पोस्ट' के लिए चित्रा मुद्गल के द्वारा दिए गए साक्षात्कार का एक अंश
14. मुद्गल, चित्रा. (2016). पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा. नई दिल्ली: सामयिक प्रकाशन. पृष्ठ 180